इक्कीसवीं सदी में यौन अधिकारों का भारतीय सिनेमा में समावेषन : हिन्दी सिनेमा के विषेश संदर्भ में एक अध्ययन

डा0 अरूण कुमार
(सहायक आचार्य अतिथि)
जनसंचार एवं पत्रकारिता विभाग
बाबासाहेब भीमराव अम्बेडकर केन्द्रीय विश्वविद्यालय, लखनऊ।

सारॉश

सिनेमा के जन्म से पहले साहित्य, रंगमंच, स्थापत्य, मूर्तिकला, चित्रकला सभी विधाओं में सेक्स वर्जित होते हुए भी किसी न किसी रूप में खुली अभिव्यक्ति पर रहा था। प्राइवेसी में तो पोर्नोग्राफी तक उपलब्ध थी। चीन, जापान, भारत की प्राचीन सभ्यताओं में भी।

भारतीय सिनेमा एक विविधतापूर्ण विषय होने के साथ–साथ सामाजिक क्रिया कलापों के आइने के तौर पर देखा जा रहा है। ऐतिहासिक दृष्टिकोंण से वर्तमान दृष्टिकोण को तरफ पहुॅचते हुये यौन अधिकारों से सम्बन्धित विभिन्न आयाम देखे एवं समझे जा सकते हैं। प्रस्तुत शोध पत्र हिन्दी सिनेमा के संदर्भ में इक्कसवीं सदी में यौन अधिकारों के समावे''न एवं उसके विभिन्न प्रभावों पर प्रका''ा डालता है।

मुख्य बिन्दु : *मानवाधिकार, समावेशन, फिल्में।*

शोध समस्या

प्रस्तुत शोध समस्या में इस प्रश्न का उत्तर जाननें की कोशिश की गयी है कि 21वीं सदी में यौन अधिकारों का भारतीय हिन्दी सिनेमा में समावेशन मुद्दे पर बी.बी.ए.यू. लखनऊ, के शोध छात्र किस प्रकार सोचते है एवं राय देते है।

शोध अध्ययन के उद्देश्य

प्रस्तुत शोध पत्र हिन्दी सिनेमा के संदर्भ में 21वीं सदी में यौन अधिकारों के भारतीय सिनेमा में समावेशन पर प्रकाश डालता है।

शोध प्रविधि

व्यवहारिक शोध पद्धति के अन्तर्गत बाबासाहेब भीमराव अम्बेडकर केन्द्रीय विश्वविद्यालय लखनऊ, के 100 छात्रों को रेन्डम सैम्पलिंग के द्वारा चुनकर (जिसमें 05 प्रश्न शामिल किये गये है) प्राथमिक आकड़े एकत्रित कर उस पर विश्लेषणात्मक अध्ययन प्रस्तुत किया गया।

प्रस्तावना

द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद विश्व भर में फैली विनाश की लीला को देखकर विश्वभर के

विद्वजनों जिनमें लेखक, रणनीतिकार, नीति विशेषज्ञ, डॉक्टर, समाजशास्त्री, धार्मिक गुरू आदि के अतिरिक्त सिनेमा से जुड़े लोग भी युद्ध के परिणामों से बुरी तरह दुःखी और चिंतित थे तथा सभी कहीं न कहीं विश्व में शांति चाहते थे और विश्व को मानव जाति के लिए रहने लायक बनाना चाहते थे। इसी विचार को आगे बढ़ाकर विश्व समुदाय ने 'संयुक्त राष्ट्र चार्टर' के बारे में कल्पना की और अंततः 1945 में संयुक्त राष्ट्र चार्टर की कल्पना वास्तविकता में बदल गयी। यह एक ऐसा दस्तावेज था जिसमें सर्वप्रथम स्पष्ट रूप से भविष्य में मानवाधिकारों के संरक्षण और संवर्धन करने की बात कही गयी। कहा गया कि चार्टर के तहत एक वैश्विक संस्था का निर्माण होना था जो आगे चलकर संयुक्त राष्ट्र संघ के रूप में सामने आयी। इसके बाद मानवाधिकारों के संरक्षण और संवर्धन के लिए पहला अंतर्राष्ट्रीय दस्तावेज तैयार हुआ जिसे मानवाधिकारों की सार्वभौमिक घोषणा 1948 के रूप में जाना गया है। इस दस्तावेज के महत्व को इस बात से समझा जा सकता है कि अभी तक इसका विश्व की 365 से अधिक भाषाओं में अनुवाद हो चुका है, जो अपने आप में एक रिकार्ड है। मानवाधिकारों के जानकार लोग इसे गीता के रूप में, कोई कुरान के रूप में, तथा कोई बाइबिल के रूप में देखता है।

इस घोषणा पत्र में मानवाधिकार सिद्धान्तों को स्पष्ट तौर पर इंगित किया गया है और मानवाधिकार के ये सिद्धान्त सार्वभौमिक हैं। इस घोषणा पत्र का पहला अनुच्छेद कहता है, सभी जन्म से स्वतंत्र और समान, गरिमा तथा अधिकारों से युक्त है। किसी भी व्यक्ति के साथ धर्म, भाषा, नस्ल, रंग, क्षेत्रियता, मूलवंश, जन्मस्थान आदि के आधार पर भेदभाव नहीं किया जा सकता है। लेकिन इसके अतिरिक्त ''अन्य स्तरों के आधार पर भी किसी व्यक्ति से भेद–भाव नहीं किया जा सकता है''। अन्य स्तरों में ''किसी बीमारी के आधार पर'' या ''किसी व्यक्ति के लैंगिकीय झुकाव'' की वजह से भी उसके साथ भेदभाव नहीं किया जा सकता है। आज यह अंतर्राष्ट्रीय कानून का अहम हिस्सा बन चुका है। यदि बात करें तो भारत को संयुक्त राष्ट्र संघ का सदस्य बने छः दशक से अधिक हो चुके हैं। संयुक्त राष्ट्र का सदस्य होने के नाते मानवाधिकार संरक्षण और संवर्धन की जिम्मेवारी प्रत्येक सदस्य राष्ट्र की होती है लेकिन आज भी भारत में अनेक मानवाधिकारों का उल्लंघन खुले आम हो रहा है। इसका अर्थ यह नहीं निकाला जाना चाहिए कि भारत में भारत की तरफ से मानवाधिकार संरक्षण एवं संवर्धन की दिशा मे कोई प्रयास नहीं किये गये हैं। आज मानवाधिकार के मुद्दे सिर्फ मानवाधिकार विशेषज्ञों के मुद्दे नहीं रहे हैं। मानवाधिकार के अनेक विषयों को न्यायपालिका, पुलिस, सामाजिक कार्यकर्ता, मानवाधिकार कार्यकर्ता, पत्रकार आदि के अतिरिक्त सिनेमाकार भी सिनेमा में अपने दृष्टिकोण से उठाते रहे हैं। मानवाधिकार के जुड़े मुद्दों को वैश्विक, क्षेत्रीय और स्थानीय स्तर पर गैर–सरकारी मानवाधिकार संगठन अनेक मानवाधिकार मुद्दों को उठाते रहे हैं। जिसके कारण आज वैश्विक स्तर पर मानवाधिकार संरक्षण और संवर्धन का एक बड़ा आन्दोलन खड़ा हो गया है। मानवाधिकार के इस वैश्विक आन्दोलन के कारण विभिन्न देशों में पुरूष, महिलायें, बच्चे आदि से जुड़े अनेक मानवाधिकार मुद्दों पर पूरे विश्व में संवाद की लहर चल रही है। इस लहर के प्रवाह से न तो वैश्विक सिनेमा और न ही भारतीय सिनेमा अछूता ह। यदि हम पिछले कुछ दशकों की बात करें तो भारतीय हिन्दी सिनेमा ने भी मानवाधिकार के मुद्दों की बहती लहरों में डुबकी लगायी है।

सर्वविदित है कि भारत एक पुरूष प्रधान देश रहा है। जहॉ पुरूषों के मुकाबले महिलाओं के मानवाधिकार कहीं कम सुरक्षित रहे हैं। विश्व की अनेक संस्कृतियों में महिलाओं को सभी तरह के अधिकार मिले हों लेकिन इनमें यौनिक अधिकार एक वर्जना के रूप में ही रहे हैं।

इतिहास गवाह है कि पुरूषों को अपने मौलिक अधिकारों की प्राप्ति के लिए एक साथ अनेक महिलाओं से विवाह करने की अनुमति रही है लेकिन एक–आधी संस्कृति, समुदाय या समाज होगा जिसमें किसी महिलाओं को अनेक पुरूषों के साथ यौन सम्बन्ध बनाने की स्वतंत्रता रही हो। इसी प्रकार अगर हम इतिहास पर नजर डालें तो विश्व के किसी कोने में शायद ही हम पायेंगे कि जहॉ महिलाओं की तरह से पुरूषों क वैश्यावृत्ति के बाजार लगते हैं। वैश्याओं की तरह पुरूषों के भी कोठे रहे हैं, जहॉ उन्होंने नारी की तरह दुखः दर्द दोनों को झेला हो। इसी प्रकार विश्व के कई देशों में महिलाओं की यौन के संवेदनशील बिन्दु को खुरदरे औजारों से काट दिया जाता है। जिससे उन महिलाओं को यौन सुख का आभास न हो सके। यही नहीं इसे अनिवार्य प्रथा के रूप में समाज की महिलाओं के ऊपर थोपा गया है। कहीं विश्व में ऐसी प्रथा है जिसमें पुरूषों के लिंग के किसी हिस्से को काटकर उसकी संवदेनशीलता पर प्रहार किया जाता हो। जिससे वह यौन सुख का आभास करता है। विश्व में भारत एक ऐसा देश है जहॉ देवदासी प्रथा के नाम पर मासूम बच्चियों एवं महिलाओं का विवाह मंदिरों में स्थापित देवताओं के साथ कर दिया जाता है। इस प्रथा के नाम पर मासूम बच्चियों और महिलाओं का जीवन पर्यन्त अनेक प्रकार से शोषण होता है जिसमें यौन–शोषण प्रमुख है। जो कि उन मासूम बच्चियों और महिलाओं के यौन अधिकारों का गम्भीर उल्लंघन है। विश्व में क्या कहीं ऐसी प्रथा भी है जिसमें पुरूषों को देवियों के साथ विवाह के बन्धन में बांधा जाता हो और उनका यौन शोषण होता हो। शायद नहीं लगता कि कहीं ये प्रथा होगी।

उपरोक्त उदाहरण से स्पष्ट होता है न सिर्फ विश्व के अन्य देशों में बल्कि भारत में भी महिलाओं की यौनिकता को पुरूष समाज द्वारा हमेशा से नियंत्रित करने का प्रयास किया जाता रहा है। इसके अतिरिक्त विश्व भर में ऐसे लोगों का एक वर्ग उभर रहा है जिनकी यौन प्रवृत्तियां समाज में प्रचलित व मान्यता प्राप्त यौनिक प्रवृत्तियों से बिल्कुल भिन्न हैं। सामान्य से अलग यौनिक प्रवृत्ति वाले लोगों की यौनिक प्रवृत्तियॉ उनके स्वयं के द्वारा निर्धारित प्रवृत्तियॉ नही हैं बल्कि ये प्रवृत्तियॉ प्राकृतिक या ईश्वर प्रदत्त हैं। इस वर्ग में जो लोग आते हैं उनमें पुरूष की तरफ आकर्षित होने वाले पुरूष, महिलाओं की तरफ आकर्षित होने वाली महिलायें। महिला के रूप में पैदा हुईं लेकिन पुरूष प्रवृत्ति के साथ जीने की तमन्ना रखने वाली महिलायें। पुरूष के रूप में पैदा हुए लेकिन महिला के रूप में जीने की तमन्ना रखने वाले पुरूष एवं तृतीय लैंगिकता वाले लोग आदि आते हैं।

इस तरह की प्रकृति के लोगों को लैंगिक अल्पसंख्यक के रूप में भी पहचाना जाता है। विश्व भर में अपने–अपने स्तर पर सैकड़ों वर्षों से विचलित यौन प्रवृत्ति वाले व्यक्ति अपने अधिकारों को प्राप्त करने के लिए संघर्ष करते आये हैं। लैंगिक अल्पसंख्यकों द्वारा अपने अधिकारों के लिए किये जा रहे अनवरत् संघर्ष का ही परिणाम है कि इस वर्ग के लोग कुछ मात्रा में ही सही खुलकर समाज के सामने आने लगे हैं। यही नहीं संयुक्त राष्ट्र संघ ने भी विश्व स्तर पर इनके अधिकारों के संरक्षण एवं संवर्धन के लिए वकालत प्रारम्भ की है। लैंगिक अल्पसंख्यकों द्वारा स्वयं व अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर अल्पसंख्यकों के मौलिक अधिकारों के संरक्षण एवं संवर्धन के प्रयासों का ही नतीजा है कि इनसे जुड़े मुद्दों को न सिर्फ न्यायालयों में, समाज में, अंतर्राष्ट्रीय मंचों पर बल्कि सिनेमा में भी स्थान मिलने लगा है।

भारतीय हिन्दी सिनेमा तब से अबतक

भारतीय सिनेमा के इतिहास पर नजर डाली जाये विशेषकर हिन्दी सिनेमा पर, तो पता लगता है कि भारतीय सिनेमा के पितामह दादा साहेब फालके द्वारा बनायी गयी पहली फिल्म 'राजा हरिश्चन्द्र'

(1913) में महारानी तारामती की भूमिका करने के लिए कोई महिला तैयार नहीं हुई। हारकर दादा–साहेब कोठे पर गए। हाथ जोड़कर उनसे तारामती के रोल के लिए निवेदन किया। वैश्याआ ने दादा को टका–सा जवाब दे दिया कि उनका पेशा फिल्म में काम करने वाली बाई से कहीं ज्यादा बेहतर है। लेकिन दादा साहेब के अथक प्रयासों के बावजूद एक भी महिला कलाकार नही मिली जबकि इस संदर्भ में दादा साहेब फालके द्वारा राष्ट्रीय स्तर पर विज्ञापन प्रकाशित करवाया गया था। इससे स्पष्ट होता है कि समाज में महिलाओं पर लगे सामाजिक प्रतिबन्ध इतने हावी थे कि कोई महिला उस भूमिका को करने के लिए आगे नहीं आयी। अंततः दादा साहेब फालके को उस भूमिका को पूरा करने के लिए एक पुरूष पात्र जिसका नाम ''अन्ना सालुंकें'' को महिला पात्र बनाना पड़ा। जो एक ढाबे में वेटर का काम करता था। स्थिति से स्पष्ट होता है कि हिन्दी सिनेमा के प्रारम्भिक दौर में भारतीय फिल्मों के संदर्भ में बात करें तो पाते हैं कि फिल्म में रोल करने के लिए महिला पात्र उपलब्ध नहीं हो रही थी। ऐसे में समाज में महिलाआ के लिए अपने यौन अधिकारों की बात करना तो बहुत दूर की कौड़ी थी। भारतीय सिनेमा के इतिहास को और आगे बढ़ाते हुए देखें तो स्थिति स्पष्ट होती है कि विभिन्न दशकों में भारतीय हिन्दी सिनेमा के विषयों में बड़ी गतिशीलता रही है जो कहीं न कहीं समाज के दर्पण के रूप में समाज को आईना दिखाती रही है। यह सर्वविदित है, कि सिनेमा समाज का दर्पण होता है। सिनेमा के प्रारम्भिक दौर में धर्म से जुड़ी फिल्में अधिक आयीं जो समाज को नैतिकता और अनैतिकता के बारे में बताती थीं। उसके बाद विषय के रूप में समाज म व्याप्त जमींदारों के अत्याचार और राष्ट्रीय आन्दोलन से जुड़ी हुई फिल्मों ने स्थान लिया। थोड़ा और आगे चलें तो श्रम सुधार से जुड़ी हुई फिल्में देखने को मिलती हैं, लेकिन कहीं न कहीं सभी फिल्मों में एक प्रमुख तत्व रहा है, वह है मनोरंजन। लेकिन पिछले कुछ दशकों से देखने में यह आया है कि अंतर्राष्ट्रीय मानवाधिकार आन्दोलन ने कहीं न कहीं भारतीय हिन्दी सिनेमा पर भी अपनी छाप छोड़ी है और जिसके फलस्वरूप भारतीय हिन्दी सिनेमा ने भी अनेक मानवाधिकार मुद्दों को अपने अन्दर समाहित किया है।

इक्कीसवीं सदी में भारतीय हिन्दी सिनेमा, समावेशन एवं यौन अधिकारः फिल्मकार एवं दर्शक मांग के द्वारा सम्बंध

इन मानवाधिकार मुद्दों में लोगों के यौन अधिकारों से जुड़े मुद्दे भी प्रमुखता से भारतीय हिन्दी सिनेमा में आये हैं। यद्यपि भारतीय यौनिक वर्जनायें बहुत ही मजबूत रही हैं लेकिन भारतीय हिन्दी फिल्म निर्माताओं ने अपने सिनेमा में यौन अधिकारों के विषय को उठाने में अत्यधिक साहस का परिचय दिया है। यदि थोड़ा पीछे मुड़कर देखें तो भारतीय सिनेमा में समाज में मान्यता प्राप्त यौन प्रवृत्ति से उलट यौन प्रवृत्ति रखने वाले व्यक्तियों पर बनी फिल्मों को समाज का कठोर विरोध झेलना पड़ा। उदाहरण के तौर पर अंतर्राष्ट्रीय महिला निर्देशक दीपा मेहता की फिल्म वाटर के न सिर्फ निर्माण के दौरान लोगों ने उसका विरोध किया बल्कि निर्माण के बाद देशभर में रिलीज होने के दौरन भी विशेष रूप से शिव सैनिकों द्वारा अनेक टॉकीजों में जहॉ फिल्म रिलीज हुई थी, अत्यधिक तोड़–फोड़ की और फिल्म को नहीं चलने दिया। इस फिल्म की काशी में शूटिंग के दौरान लोगों ने अत्यधिक हंगामा किया था। यह इस बात का द्योतक है कि आज भी भारतीय समाज पुरूष प्रधान समाज है और महिलाओं की यौनिकता पर अपना नियंत्रण रखना चाहता है।

उपरोक्त से प्रतीत होता है कि हिन्दी सिनेमा में ऐसी फिल्मों का एक नया अध्याय शुरू हुआ है जो भारतीय समाज में मानवीय यौन प्रवृत्ति के सम्बन्ध में व्याप्त यौन वर्जनाओं को ध्वस्त कर देना चाहती है तथा यौन अल्पसंख्यकों को उनके अधिकार दिलाने की वकालत करने के साथ–साथ समाज को मानावधिकार के उभरते हुए उन मुद्‌दों से भी अवगत कराना चाहती है, जो एक शांति प्रिय और न्यायप्रिय समाज की स्थापना के लिए आवश्यक है।

अतः भारतीय हिन्दी सिनेमा में यौन अधिकारों के समावेशीकरण और उसका समाज पर प्रभाव पड़ने वाले प्रभाव की जॉच पड़ताल की तत्काल आवश्यकता है।

भारतीय सिनेमा विशेषकार हिन्दी सिनेमा द्वारा फिल्मों के माध्यम से जो प्रस्तुतीकरण भूतकाल से वर्तमान तक सामने आते हैं, वे मुख्यतः प्रेमी–प्रेमिका के बीच प्रम संबंधों, नायक द्वारा एक सुनिश्चित लक्ष्य को पाने से सम्बन्धित रहे हैं। हिन्दी सिनेमा शुरूआत से ही नायक प्रधान फिल्मों को प्रस्तुत करता आ रहा है। जिसमें समाज में महत्वपूर्ण रूप से महिलाएं, बच्चे एवं अन्य वर्ग को यथास्थान न तो दिखाया जाता है और न ही परिभाषित किया जाता है। हिन्दी फिल्में जो कहानियॉ प्रस्तुत करती हैं उसमें विशेष रूप से ''यौन अधिकारों के मुद्‌दे'' जो कि न केवल महिलाओं से सम्बन्धित हैं बल्कि इसमें पुरूषों, बच्चों एवं ऐसे हर वर्ग के प्रतिनिधि से सम्बन्धित है जो समाज में हमेशा से हाशिये पर रखे जाते रहे है। विशेष रूप से लिंग, लैंगिकता आदि में सामाजिक एवं धार्मिक बन्धन के साथ ही देखे या दिखाये जाते हैं जो कि वर्तमान हिन्दी सिनेमा द्वारा महसूस किया जा रहा है।

जैसा कि हम जानते हैं कि परम्परागत सिनेमा जिसके अर्न्तगत कभी महिलाओं को फिल्मों में स्थान चाहकर भी नहीं दिया जा सकता था, जैसा कि अन्ना सांलुके जैसे अन्य पुरूष कलाकार ही महिला पात्रों की भूमिका को प्रदर्शित करते थे, की स्थिति वर्तमान परिपेक्ष्य में विपरीत है। वर्तमान में हिन्दी सिनेमा, सिनेमाकार एवं सम्बन्धित व्यक्ति न केवल महिला केन्द्रित फिल्मों का चयन एवं निर्माण का कार्य कर रहे बल्कि इससे भी आगे निकलकर फिल्मों में 'यौन अधिकारों' का एक नया चलन सामने आता दिखाई दे रहा है। इस संदर्भ में हिन्दी सिनेमा द्वारा मुख्यतः फिल्में–फायर, कामसूत्र, वाटर, डोर, उत्सव, जिस्म, जिस्म–2, मर्डर, दि डर्टी पिक्चर, जुबैदा, दोस्ताना, दरम्या, अर्धनारी, चित्रांगदा : दि क्रानिंग विश, गर्ल फ्रैन्ड, दि पिंक मिरर, परपल स्काई आदि प्रस्तुत की जा चुकी है। इसी धारा के अन्तर्गत एक और धारा जो कि हिन्दी सिनेमा में समलैंगिकता अधिकारों की तरफ इशारा करते हुए कहीं न कहीं यौन अधिकारों को बताने का एवं समावेशित करने का कार्य हिन्दी सिनेमा एवं सिनेमाकारों द्वारा किया जा रहा है। अगर इस तरह की स्थिति को हिन्दी सिनेमा द्वारा सामने लाए जाने का प्रयास किया जा रहा है तो यह हिन्दी सिनेमा एवं सिनेमाकारों द्वारा न केवल यौन अधिकारों को समावेशित एवं सुरक्षित करने का कार्य किया जा रहा है बल्कि यह मानवाधिकार संरक्षण एवं संवर्धन, जो कि राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय कानूनों में उल्लेखित एवं मान्यता प्राप्त है, को भी प्राप्त करने का गंभीर प्रयास है।

यदि हिन्दी सिनेमा में कामसूत्र, फायर, वाटर, जिस्म–2, मर्डर, जुबदा आदि फिल्मों को, मानवाधिकारों जिसमें यौन अधिकार शामिल है, की दृष्टि से देंखे तो यह फिल्में भी समाज की ऐसी सच्चाई को उजागर करती हैं जिस पर न तो कभी चर्चा की जाती है और न ही अन्य कार्य किया जाता है। मुख्यतः इन विषयों को या ऐसी फिल्मों का हमेशा सामाजिक एवं धार्मिक विरोध का सामना करना पड़ा है। जो कि हिन्दी सिने मा एव ं ऐस` सिनेमाकारों ,जो सच्चाई को दिखाने मे हिन्दी सिनेमा के माध्यम से सामने रखने का साहस करते हैं। उपरोक्त समस्त तथ्य दर्शात` हैं

कि भारतीय हिन्दी सिने मा मे ं यौन अधिकारो ं को समावे शित किये जाने का कार्य मूर्त रूप पाने का प्रयास कर रहा है।

सांख्यिकीय विश्लेषण

प्र01– इक्कीसवीं सदी की हिन्दी फिल्मो ं मे ं यौन अधिकारो ं सम्बन्धी अन्तर्वस्तु के सम्बन्ध मे ं आप क्या कहें गे ?

चित्र सं0–1

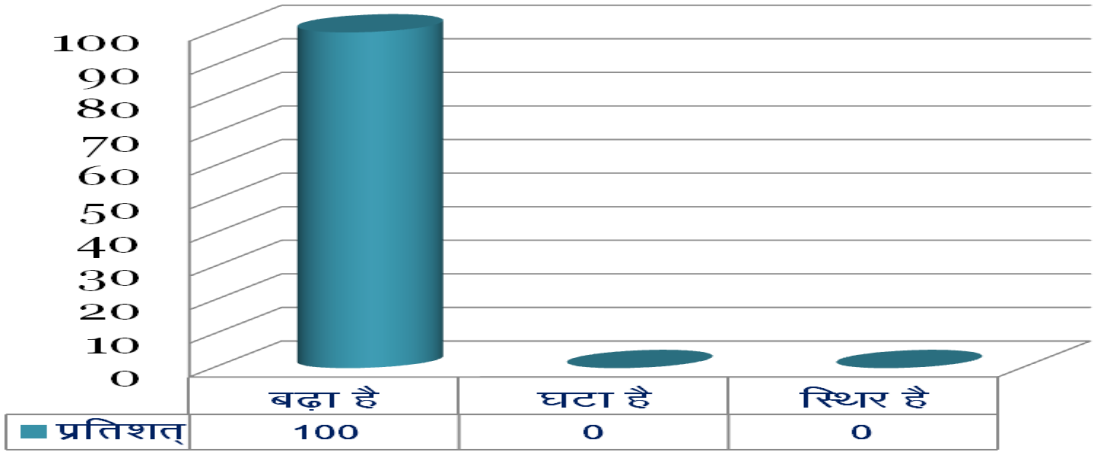

विश्लेषण

100 उत्तरदाता इस अध्ययन में शामिल है, जिसमें प्रश्न 1 के जवाब में 100 उत्तरदाता मानते है कि 21वीं सदी की हिन्दी फिल्मों मे ं यौन अधिकारो ं सम्बन्धी अन्तर्वस्तु का स्तर बढ़ा है।

व्याख्या

इस प्रश्न के उत्तर के सम्बं ध मे ं यह व्याख्या होती है कि 21वीं सदी की हिन्दी फिल्मों मे ं यौन अधिकारो ं सम्बन्धी अन्तर्वस्तु का स्तर बढ़ा है।

प्र02– यौन अधिकारो ं की मॉग का इक्कीसवीं सदी की हिन्दी फिल्मो ं मे ं समावे शन किस प्रकार से देखा जा सकता है।

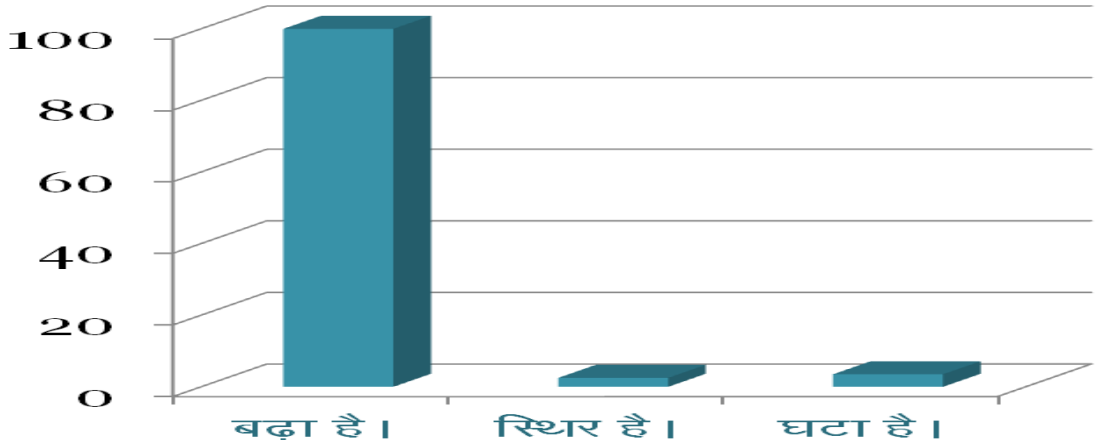

चित्र0–2

विश्लेषण

100 उत्तरदाता इस अध्ययन में शामिल है, जिसमे प्रश्न 2 के जवाब में 100 उत्तरदाताओ ं का मानना है कि यान अधिकारो ं की मांग का 21वीं सदी की हिन्दी फिल्मों मे ं समावे शन बढ़ा है। स्थिर शून्य है एवं घटा शून्य है।

व्याख्या

इस प्रश्न के उत्तर के सन्दर्भ में यह व्याख्या स्पष्ट है कि यौन अधिकारो ं की मांग का 21वीं सदी की हिन्दी फिल्मों मे ं समावे शन बढ़ा है।

प्र03– आप वर्तमान हिन्दी फिल्मों मे ं यौन अधिकारो ं को किस दृष्टिकोण से दे खते है ?

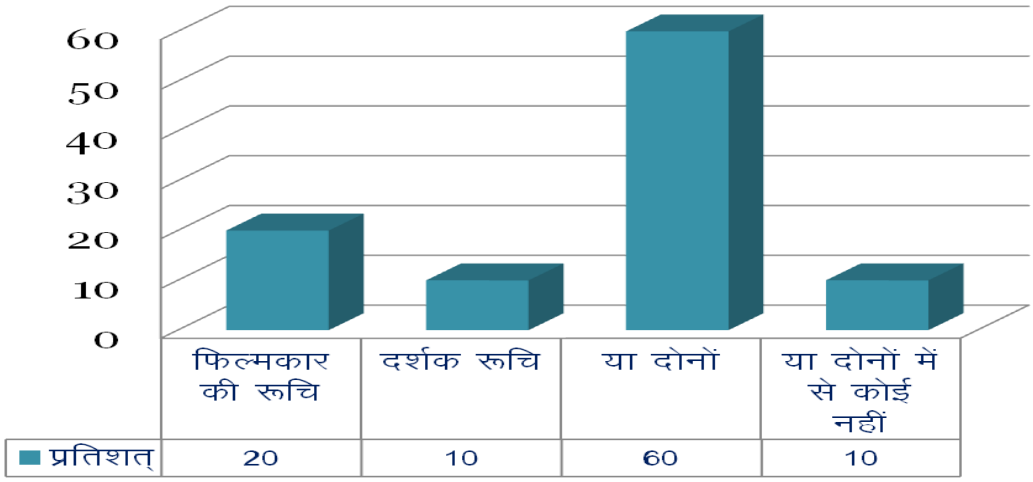

चित्र सं0–3

विश्लेषण

100 उत्तरदाता इस अध्ययन में शामिल है, जिसमें प्रश्न 3 के जवाब म 20 उत्तरदाताओं का कहना है कि हिन्दी फिल्मों में यौन अधिकारों को फिल्मकार की रूची के दृष्टि कोण से देखते है। वहीं 10 उत्तरदाताओं का कहना है कि दर्शक रूची एवं 60 का मानना है कि फिल्मकार एवं दर्शक दोनो की रूची से साथ ही साथ 10 का मानना है कि दोनो म से कोई नहीं।

व्याख्या

इस प्रश्न के उत्तर के सन्दर्भ में यह व्याख्या होती है कि हिन्दी फिल्मों में यौन अधिकारों को अधिकांशतः लोगो का मानना है कि फिल्मकार एवं दर्शक दोनो की रूची के दृष्टि कोण से देखते है।

प्र04–क्या आप वर्तमान में हिन्दी सिनेमा को योन समावेषित हिन्दी सिनेमा कहा जा सकता है या नहीं ?

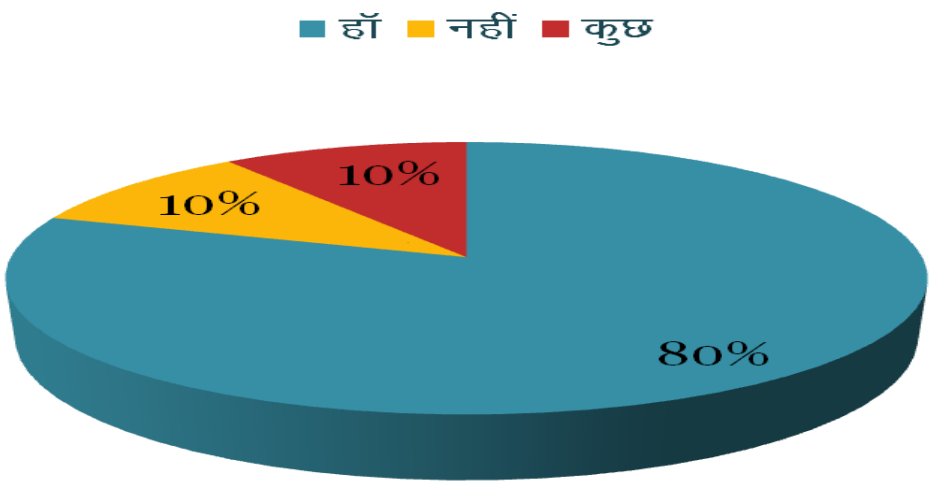

चित्र सं0–4

विश्लेषण

100 उत्तरदाता इस अध्ययन में शामिल है, जिसमें प्रश्न 4 के जवाब में 80 उत्तरदाताओं का मानना है कि वर्तमान में हिन्दी सिनेमा को यौन समावेशित हिन्दी सिनेमा कहा जा सकता है। वहीं 10 का कहना है कि हॉ एवं 10 का कहना है कि नहीं।

व्याख्या

इस प्रश्न के उत्तर के सन्दर्भ में यह व्याख्या स्पष्ट होती है कि अधिकांशतः लोगो का यह मानना है कि वर्तमान में हिन्दी सिनेमा को यौन समावेशित सिनेमा कहा जा सकता है।

प्र05–आपके अनुसार वर्तमान में इक्कीसवीं सदी के हिन्दी सिनेमा में सेक्सुअलिटी का कन्टेन्ट होना चाहिए या नहीं ?

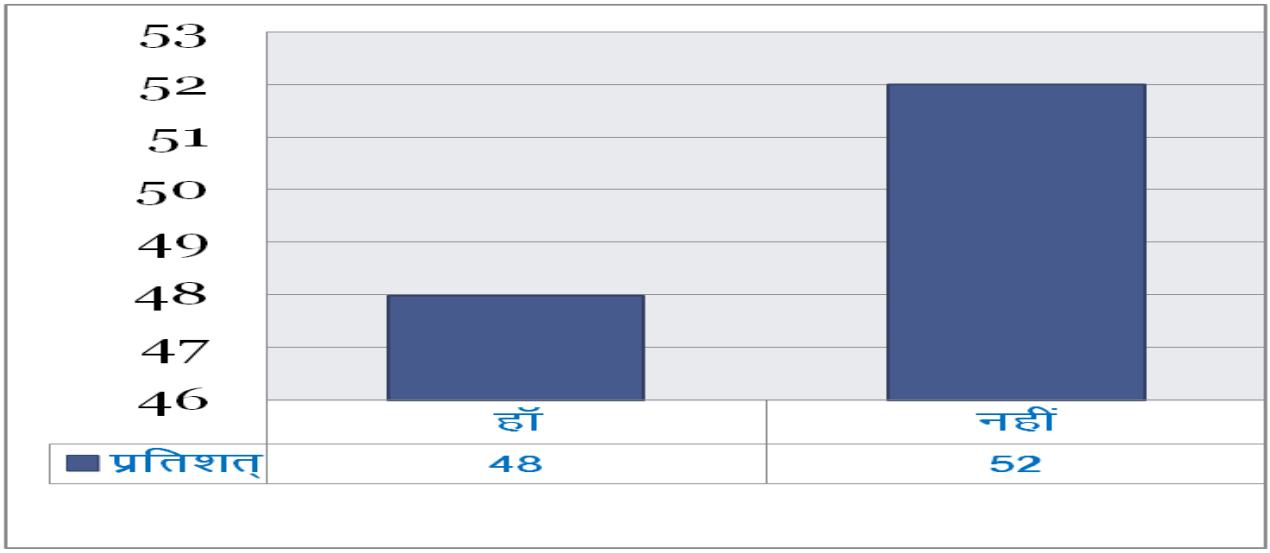

चित्र सं0– 5

विश्लेषण

100 उत्तरदाता इस अध्ययन में शामिल है, जिसमें प्रश्न 5 के जवाब में 48 उत्तरदाताओं का मानना है कि 21वीं सदी के हिन्दी सिनेमा में सेक्सुअलिटी का कन्टेन्ट होना चाहिए। वहीं 52 उत्तरदाताओं का मानना है कि सेक्सुअलिटी का कन्टेन्ट नही होना चाहिए।

व्याख्या

इस प्रश्न के उत्तर के सन्दर्भ में यह व्याख्या स्पष्ट होती है कि वर्तमान हिन्दी सिनेमा में सेक्सुअलिटी के कन्टेन्ट की मांग दिन प्रतिदिन बढ़ रही है

निष्कर्ष

मानवाधिकार विश्व में प्रत्येक व्यक्ति को बिना किसी भेदभाव के उसे उसके मानव होने के नाते मिले हैं। व्यक्ति का गरिमा के साथ जीने का अधिकार, भोजन का अधिकार, एक निश्चित आयु के बाद अपनी इच्छा से परिवार बनाने का अधिकार, शिक्षा का अधिकार, कानून के समक्ष समानता का अधिकार, स्वतन्त्रता का अधिकार आदि की तरह ही प्रत्येक व्यक्ति के सम्पूर्ण विकास के लिए उसके यौन अधिकारों का संरक्षण एवं संवर्धन भी आवश्यक है। व्यक्तियों के यौनिक अधिकारों के संरक्षण एवं संवर्धन के लिए जिस प्रकार सरकारी संगठन, गैर सरकारी संगठन और मीडिया की भूमिका महत्वपूर्ण होती है। उसी प्रकार यौन अधिकारो के संरक्षण एवं संवर्धन में फिल्मों की भूमिका को किसी भी रूप में कम नहीं आंका जा सकता है। अतः भारतीय हिन्दी फिल्में यौन अधिकारों के समावेशीकरण द्वारा यौनिक अधिकारों को आम लोगों तक पहुॅचा रही हैं तथा उनके संरक्षण एवं संवर्धन में अपनी भूमिका अदा कर रही हैं।

सन्दर्भ सूची

1. देव, अर्जुन. देव, अर्जुन इंदिरा. दास, सुप्ता. (1998). मानव अधिकार स्रोत ग्रंथ. : एन0सी0ई0आर0टी0. नई दिल्ली

2. अवस्थी, डॉ0 शैलेन्द्र कुमार. (2000). मानवाधिकार विधि. इलाहाबाद : ओरिएन्ट पब्लिशिंग कम्पनी, इलाहाबाद.

3. लेविन, लेह. (1998). ह्यूमन राइट्स क्वशचन एण्ड आनसर. नई दिल्ली : नेशनल बुक ऑफ इण्डिया, नई दिल्ली।

4. जोशी, डॉ कविता. (2004). सेक्सुअलिटी इन इण्डिया. दिल्ली : कल्पाज पब्लिकेशन. नई दिल्ली.

5. नरेन, अरबिन्द. भान, गौतम. (2011). विकास आई हैव वाइस. रूटस पब्लिकेशन.

6. राउथस, ए0 स्पेन्सर. नेविड, एस0 जेफरी. राउथस, लुईस फिचनर. (2000). ह्यूमन सेक्सुअलिटी इन ए वर्ड आफ डाइवरसिटी. बोस्टन : यूनाइटेड स्टेट आफ अमेरिका.

7. ताम्रकर, श्रीराम. (2012, नवम्बर–दिसम्बर). भारतीय सिनेमा का सुनहरा अतीत. आउट बुक सिनेमा विशेषांक, 62.

8. भारद्वाज, विनोद. (2012, नवम्बर–दिसम्बर). सेक्स, सेंसर और धोखा. आउट बुक सिनेमा, विशेषांक, 44.

फिल्मोग्राफी

दैट गर्ल इन यलो बूट्स, साहिब, बीबी और गैगस्टर, लव, सेक्स और धोखा, रागिनी एम0एम0एस0, एतराज, जूली, रिवाज, मर्डर–2, ख्वाहिश, फायर, कामसूत्र, वाटर, डोर, उत्सव, जिस्म, जिस्म–2, मर्डर, दि डर्टी पिक्चर, जुबैदा, दोस्ताना, दरम्या, अर्धनारी, चित्रांगदा : दि क्रानिंग विश, गर्ल फ्रैन्ड, दि पिंक मिरर, परपल स्काई.

Copyright © 2017 *Dr. Arun Kumar*. This is an open access refereed article distributed under the Creative Common Attribution License which permits unrestricted use, distribution and reproduction in any medium, provided the original work is properly cited.